भक्त रज्जब

गोपीनाथ पारीक 'गोपेश'
अध्यक्ष साहित्य सरोवर संस्था
जयपुर

यह हमारी सत्य सनातन संस्कृति जिस अध्यात्मवाद को अधिक महत्त्व देती है, उसका मूल हमारे वेद हैं। इन वेदों में मुख्यतः ज्ञान, उपासना और कर्म की मीमांशा की गई है। वेदों के ब्राह्मणभाग प्रधानतया कर्म की, आरव्यक भाग उपासना की तथा उपनिषद् भाग ज्ञान की व्याख्यायें प्रस्तुत करते हैं। अध्यात्मवाद की इन तीनों धाराओं से आप्लावित होते हुये ही आत्मतत्त्व की विवेचना के लिये षड्दर्शनों की संरचना की गई। इन दर्शनों में वेदान्त दर्शन की विशेष महत्ता है। इसी दर्शन की व्याख्याओं को लेकर विविध मत विद्वानों ने प्रकट किये। इन्हीं मतों के रूप में वैष्णव आचार्यो के नाम से कई सम्प्रदाय प्रचलित हुये जो आज तक भी भारत में प्रचलित हैं। इन सम्प्रदायों के ये विविध वाद संस्कृतज्ञ विज्ञ जनों के लिये ही बोधगम्य है।

मध्यकालिक सन्त महात्माओं ने इस अध्यात्मवाद के तथा दर्शनों में मुख्यतः वेदान्त दर्शन के सिद्धान्तों का लोकभाषा में प्रचार-प्रसार किया। दर्शनों के जटिल सिद्धान्तों को लौकिक दृष्टान्तों के द्वारा सरल शब्दों में सर्व साधारण के समक्ष इन सन्तों ने प्रस्तुत किया। जो भी इन सन्तों ने प्रवचन एक दिये तथा जो भी उनके द्वारा ये ग्रन्थ लिखे गये उनमें उनका अनुभव बोलता है। इस अनुभव के साथ ही इनमें उनका सच्चरित्र तथा उच्च व्यक्तित्व भी दिखाई देता है, जिससे उन के सद विचारों का तथा कल्याणकारी सिद्धान्तों का सुगमता से प्रचार हुआ। उन सन्त महात्माओं में कबीर, नानका नामदेव और दादू आदि के नाम विशेष परिगणनीय है। उनके सिद्धान्त तथा उपदेश, उनकी वाणियों में उपलब्ध होते हैं।

दादूजी की वाणी निर्गुण अद्वेतवाद एवं निर्गुण भक्ति के सिद्धान्तों से ओत प्रोत है। कवीर की भाँति दादूजी ने भी जातिभेद, वर्णभेद तथा अन्य सामाजिक रुढियों का खण्डन किया किन्तु इनमें कबीर की भाँति अवखड़पन नहीं है। दादूजी स्वयं विनय, सरलता तथा निरभिमानता के सजीव स्वरूप थे। अतः उनकी वाणी में इन सभी गुणों की सत्यता के दर्शन होते हैं। ऐसे ही सन्तों के लिये नाभाजी ने भक्त माल में कहा है

कलि बिसेष परची प्रगट आस्तिका है के चितधरौ।
उतकर्ष सुनत संतनिको अचरज कोऊ जिनि करौ।

निर्गुण निराकार उपासना पद्धति के भारतवर्ष में अन्य पन्थ भी हुये, जैसे रामस्नेही पन्थ, सत्य- नामी पन्थ, कबीर पन्थ, नानकपन्थ, लाल दासीपन्थ आदि किन्तु राजस्थान में दादूपन्थ का विशेष विस्तार हुआ। इस पन्थ के अनुयायी अधिकाधिक हुये। दादूदयाल जी का जन्म अहमदाबाद में सम्वत् 1601 में हुआ। सम्वत् 1619 में वे करडाला, सं. 1630 में सांभर और सं. 1637 में वे आमेर आये। इसके पश्चात् मारवाड़ के कई ग्रामों में भ्रमण करते हुये वे से 1659 के प्रारम्भ में नरायणा आये और सं० 1660 में वे ब्रह्मलीन हो गये। अपने जीवन का सर्वाधिक समय आपने आमेर में बिताया। आप यहाँ लगभग दस वर्ष रहे। सं. 1646 में आमेर के राजा मान- सिंह हुये थे, इससे पूर्व भगवन्त दास राजा थे। ये भगवन्तदास दादूजी से अत्यधिक प्रभावित थे।

सन्तप्रवर दादूजी के कई शिष्य हुये, उनमें 52 शिष्य मुख्य गिने जाते हैं—

दादू दीन दयाल के, चेले दोय पचास।

इन शिष्यों में सन्त रज्जब जी प्रमुख शिष्य कहे जाते हैं, जिन्होने दादूजी की सन्तपरम्परा का श्रेष्ठ निर्वहन किया। इन के विषय में स्वामी राघवदास जी भक्तमाल' में लिखते हैं.

निराकार निर्लेप निरंजन निर्गुण गायो।
सर्वंगी तत कवन्यो, काव्य सब ही को ल्यायो॥

सारखी शब्द रु कवित, बिना दृष्टान्त न कोई।
जितने जग प्रस्ताव, रहे कर जोड़े दोई॥

दिन प्रति दूल्हा ही रह्यो त्यागी सही सु नाम को।
दादू को शिष सावधान, रज्जब अज्जब काम को

सन्त रज्जब के विषय में शोध परक अध्ययन सर्वप्रथम जयपुर (सिरसी) निवासी विद्या भूषण पुरोहित श्री हरिनारायण जी ने किया। इसके बाद में कानपुर के ब्रजलाल वर्मा, ब्रजेन्द्र कुमार सिंहल आदि ने भी रज्जवजी के विषय में विस्तार से वर्णन किया है।

रज्जब जी का जन्म गुस्लिम धर्मावलम्बी लुहार पठान परिवार में हुआ था। इनके माता-पिता सांगानेर (जयपुर)के रहने वाले थे जब वे सोलहवर्ष के हुये तब उनका विवाह आमेर में होना निश्चित हुआ। उस अवधि में दादूजी आमेर में ही निवास करते थे। रज्जब जी उनके उपदेश सुनने कई वार सांगानेर से आमेर जाते थे। वे उन सन्त प्रवर के उपदेशों से बड़े प्रभावित थे। जब उनकी बरात आमेर पहुंची तो उसी दूल्हे के भेष में ही विवाह से पूर्व उन्होने गुरु दादूदयाल से मिलने की इच्छा जाहिर की। वे अपने कुछ साथियों तथा अपने छोटे भाई बाजीद के साथ दादूजी से आशीर्वाद लेने आमेर के दादूद्वारे पहुँचे। यह दादू द्वारा आमेर में मावठा तालाब के सामने ही स्थित है। जब वे वहाँ दादूद्वारे पहुंचे तो दादूजी ध्यान में लगे हुये थे। दादूजी को ध्यानस्थ देख कर रज्जब जी के साथियों ने कहा- 'दादूजी के दर्शन तो हमने कर ही लिये हैं, अब हम यहाँ से चलें, हमारी सब वहाँ इन्तजार कर रहे होंगे। तब रज्जब जी ने कहा- उन्हों ने तो हमें अभी देखा नहीं है अतः उनके ध्यान से हटने पर ही हम यहाँ से चलेंगे इतना कह कर वे वहीं बैठ गये। कुछ देर बाद जब दादूजी का ध्यान पूरा हुआ तो उन्होंने आँखें खोली | रज्जब ने उठकर गुरुचरणों में सादर प्रणाम किया रज्जब को दूल्हे के भेष में देखकर दादूजी ने कहा.

किया था शुभ काम को, सेवा सेवा कारण साज ।
दादू भूला बन्दगी, सरेन एक हु काज ॥

सुनते ही रज्जब जी को ज्ञान हुआ और अपने सिर पर रखे हुये मोड़ (सेहरे) को उतारकर उन्होंने अपने छोटे भाई के सिर पर रख दिया / रज्जब जी गुरुचरणों में लेट गये और फिर वे उनके साथ ही रहे। उनका शिष्यत्व उन्होंने तन मन से स्वीकार कर लिया। उनको यह ज्ञान दूल्हे के भेष में ही हुआ था अंतः वह दूल्हे वाला भेष ही उन्होंने पूरे जीवन भर रखा।

रज्जब जी के साथी उन के छोटे भाई को लेकर वहाँ गये जहाँ बरात ठहरी हुई थी। रज्जब जी के पिता चाँद खाँ पठाना आमेर की सेना में सहायक नायक के पद पर कार्यरत थे, को जब सारा वृतान्त ज्ञात हुआ तो उन्होंने वह विवाह अपने छोटे बेटे को लेकर सम्पन्न किया।

अब तो रज्जब जी गुरु दादूदयाल के साथ ही रहे। जहाँ भी दादूजी गये वे भी उनके साथ गये। यह सब दादूजी के उप देशों का ही प्रभाव था। तब ही तो इनके विषय में स्वामी रामचरण जी ने कहा है-

रज्जब कूँ दादू दिया एक सबद में ज्ञानि । '
रामचरण सब त्यागि करि हो गया गुरु समानि ॥

रज्जब जी ने दादूजी के उपदेशों का गहन अध्ययन किया और फिर उनका प्रचार - प्रसार किया। कहते हैं कि दादूजी की बाणी के अंगों का विभाजन इन्होने ही किया था। स्वयं ने भी मुख्यतः दो ग्रन्थ लिखे जो 'रज्जबबाणी' और 'रज्जब की सरबंगी के नाम से विख्यात है।

पुरोहित हरि नारायण जी ने सरबंगी का तात्पर्य सर्वांगयोग' लिखा है किन्तु श्री ब्रजेन्द्र कुमार सिंघल ने रज्जब की सर बंगी' (रायगढ़-छत्तीसगढ़ से प्रकाशित) की विस्तृत भूमिका में स्पष्ट करते हुये लिखा है कि. "शब्द के व्युत्पत्ति-लभ्य अर्थपर विचार करने पर इसका सही रूप सर्वांगी, ही निष्पन्न होता है जिसका तात्पर्य होगा ऐसा संग्रह जिसमें समस्त अंगों (विषयों) से सम्बद्ध संत वाणी हो। सन्त रज्जब न तो संस्कृतज्ञ और न संस्कृत भाषा के पक्षधर थे वे तो. प्राकृत भाषा के पक्षधर थे जो आम-फहम हो। उन्होंने अपनी वाणी की रचना भी आम-फहम भाषा में ही की है जो भारतीय-हिन्दू-मुस्लिम जनता द्वारा सहज में समझी जा सकती है।"

रज्जब जी का इन ग्रन्थों का रचना काल 1650 सं० से 1730 सं. है। इनमें आपने कई महत्व पूर्ण विषयों पर चर्चा की है। आपने समस्त संकीर्ण ताओं से ऊपर उठकर जीवनमूल्यों की प्रतिष्ठा करने का हमें उपदेश दिया है। तब ही तो यह कहा गया है।

रज्जब र च्चित सांसतर, सरबंगी सब सार।
गुरु दादू की दृष्टि सौं, क्षीर नीर सुविचार॥

श्री दादू चरितामृत (द्वितीय भाग) में लेखक संत- कवि स्वामी नारायणदासजी (पुष्कर) ने एक प्रसंग का उल्लेख किया है, जिसमें कहा गया है कि-एकदिन बसी गाँव के भक्तो के आग्रह से दादूजी शिष्यों के सहित वहीं जा रहे थे। बीच में एक नाला आया जिसमें कीचड अधिक था। दादूजी के आदेशानुसार कुछ शिष्य तो पत्थर लाने गये जिन पर पैर रखकर नाला पार करना था किन्तु रज्जबजी उस नाले में लेट गये और गुरुजी से विनय करने लगे - आप मेरे शरीर पर पैर रख कर नाला पार कर लें, इससे मेरा शरीर भी पवित्र हो जायेगा। यह देख कर सभी चकित हुये। गुरुजी भी बहुत प्रभावित हुये। अन्त में उन्हें उठा कर पत्थरों पर पैर रख कर ही नाले को पार किया गया।।

रज्जबजीने आत्म कल्याण की ही नहीं, मानवमात्र की ही नहीं, जीवमात्र के कल्याण की बातें कही है। आपने जीव हत्या एवं माँस भक्षण का विरोध करते हुये कहा है

नाम सगौती बोलिये, कहिये ते माँ अंश।
सो रज्जब क्यों खाइये, प्रत्यक्ष अपना वंश ।

दादूजी के अन्तिम समय में रज्जब जी उपस्थित थे

गुरु दादू रू कबीर की काया भई कपूर ।
रज्जब अज्जब देखिया सरगुन निरगुन नूर ॥

दौसा के सुन्दरदास जी (छोटे) दादू पन्थ के शंकराचार्य कहे गये हैं। वे बहुत विद्वान कवि थे। कहते है कि दादूजी के शिष्य जग्गा जी ही सुन्दरदास के रूप में उत्पन्न हुये थे। जब वे छह वर्ष के थे तब ही इस सम्प्रदाय में दीक्षित हो गये थे। दादूजी के आदेशानुसार इनके अभिभावक रज्जबजी ही बने थे। यद्यपि इन सुन्दरदास जी ने शास्त्रीय अध्ययन बनारस में रह कर किया था किन्तु संत- मत का गुरुगंभीर ज्ञान उनको रज्जब जी से ही मिला था। दादूजी के बाद नरायणा के, गरीबदासजी को पीठाधीश्वर बनाने में रज्जबजी का ही प्रमुख योगदान रहा था- **रज्जब दास गरीब सुनावत क्यूं न लहो गुरु आसन भाई।**

इसके पश्चात् वे अपने सांगानेर में स्थित आश्रम में ही रहे। उन के कई शिष्य हुये जिनमें गोविन्द दास , छीतरदास, मोहन दास प्रमुख रहे। सन्त महात्मा रज्जब दास जी वि० सं० 1746 में 122 वर्षों तक इस धरा पर ब्रह्मचि न्तन एवं सत्संगत में रत रहते हुये प्रभुचिन्तन करते हुये ब्रह्मलीन हो गये।